# विचार संगम

## भारतीय दर्शन, विज्ञान, साहित्य-कला और तकनीकी के विशेष संदर्भ में

सम्पादक
डॉ. दिनेश चन्द्र शर्मा

# विचार संगम

## भारतीय दर्शन, विज्ञान, साहित्य-कला और तकनीकी के विशेष संदर्भ में

सम्पादक :

डॉ. दिनेश चन्द्र शर्मा

**Ph.D., D.Lit. (Sub.)**

निदेशक, कॉम्पिटिशन प्लस ग्रुप ऑफ इन्स्टीट्यूशन,
अजमेर

**Books n Books**

51/1509, आचमन, वेदविहार,
लोहाखान, अजमेर-305001

प्रकाशक :

पुष्पा शर्मा

**Books n Books**

51/1509, आचमन, वेदविहार,

लोहाखान, अजमेर-305001

ई-मेल : bnbajmer@gmail.com

संस्करण

प्रथम 2025

**ISBN : 978-81-993854-0-5**

मूल्य - 400/-

रचना - विचार संगम-भारतीय दर्शन, विज्ञान, साहित्य-कला और तकनीकी के विशेष संदर्भ में

सम्पादक - डॉ. दिनेश चन्द्र शर्मा

मुद्रक - श्रीनिवास प्रिन्टोग्राफिक्स, अजमेर

1

# स्वामी दयानन्द के पत्रों के संदर्भ में राजनीतिक चिंतन

**डॉ. मुकेश शर्मा**
**विभागाध्यक्ष ( समाज विज्ञान विभाग )**
**हुकुमचन्द नोबेल इंस्टीट्यूट ऑफ साईंस एण्ड टेक्नोलॉजी, अजमेर**

महर्षि दयानन्द का आविर्भाव उन्नीसवीं शताब्दी में उस समय हुआ, जब भारत ब्रिटिश राज के अधीन था और ईस्ट इंडिया कम्पनी का शासन अपने चरम पर था। स्वामी दयानन्द ने अपनी तीक्ष्ण दृष्टि से उस युग की धार्मिक, सामाजिक और राजनीतिक परिस्थितियों का गहन अध्ययन किया। उन्होंने अपने विचारों की स्थापना के लिए एक समन्वित दृष्टिकोण अपनाया, जिसमें धर्म, समाज और राजनीति—तीनों का सशक्त आधार सम्मिलित था।

स्वामी दयानन्द ने भारतीय राष्ट्रवाद को एक निश्चित दिशा प्रदान की। उन्होंने लोकतांत्रिक विचारों के आधार पर आर्य समाज की स्थापना की और उसके संगठन में चुनाव द्वारा प्रतिनिधि-प्रणाली को स्वीकार किया। निर्वाचन के सिद्धान्त को अपनाकर उन्होंने व्यक्ति के महत्व को प्रतिष्ठित किया और जनतंत्र की भावनाओं को प्रबल रूप से उद्दीप्त किया।

**1. स्वामी दयानन्द के चिन्तन में राजनीतिक विवेचना**

स्वामी दयानन्द सरस्वती का विश्वास था कि किसी भी विचार या व्यवस्था की सार्थकता तभी है जब वह वेदों पर आधारित हो और स्थायी हो। इसी वेदसम्मत दृष्टिकोण के आधार पर उन्होंने भारत की राजनीतिक दुर्दशा को दूर करने हेतु देशी रियासतों के राजाओं और महाराजाओं से सम्पर्क स्थापित किया।

उन्होंने शासकों को उत्साह, विद्या, बल, पराक्रम और सत्यनिष्ठा जैसे गुणों को अपनाने का उपदेश दिया। राजस्थान में उदयपुर के महाराणा सज्जन सिंह से उनका परिचय 1881 ई. में हुआ, जिन पर उनके विचारों का गहरा प्रभाव पड़ा।

स्वामी दयानन्द ने मनुस्मृति के राजधर्म प्रकरण के आधार पर अपने राजनीतिक सिद्धान्तों की स्थापना की और शासकों में राज्य संबंधी प्रज्ञा तथा सत्य-असत्य बोध की चेतना जगाई। उन्होंने महाराणा सज्जन सिंह को मनु-आधारित राजधर्म का उपदेश दिया और पत्राचार द्वारा शासन संचालन के संबंध में मार्गदर्शन प्रदान किया।

डॉ. भवानीलाल भारतीय ने स्वामी दयानन्द के राजनीतिक विचारों का उल्लेख करते हुए बताया कि उनका शासन दृष्टिकोण धर्म, लोकक्ल्याण और जनसहभागिता पर आधारित था। स्वामीजी का मत था कि शासन में वेदोक्त धर्मावलम्बियों को प्राथमिकता दी जाए, कर्मचारियों की मृत्यु के बाद उनके परिवार के पालन की व्यवस्था और पेंशन दी जाए। उन्होंने बाल विवाह पर रोक और युवावस्था में विवाह को अनिवार्य माना। राज्य की आय का दशांश धर्मकार्य में व्यय करने तथा शासन में प्रजातांत्रिक मूल्यों को अपनाने पर बल दिया। स्वामीजी के अनुसार, राजकार्य राजा और जनप्रतिनिधियों की सहमति से होना चाहिए और प्रजा को धर्मनिष्ठ राजा को परमेश्वर के बाद दूसरा स्थान देना चाहिए। राज्य संचालन में वेद, मनुस्मृति, महाभारत और विदुर नीति से मार्गदर्शन लेने की सलाह दी गई। इन सिद्धान्तों से स्वामी दयानन्द का उद्देश्य धर्माधारित, न्यायपूर्ण और लोकक्ल्याणकारी शासन की स्थापना करना था।

**2. स्वामी दयानन्द द्वारा राजाओं को लिखे गये पत्रों में राजनीतिक विचार**

स्वामी दयानन्द सरस्वती ने अपने पत्रों के माध्यम से देशी राजाओं को धर्म और राजनीति का समन्वित मार्ग दिखाया। उन्होंने उदयपुर के महाराणा सज्जन सिंह को राजधर्म और प्रजाक्ल्याणकारी शासन का उपदेश दिया, जिसे महाराणा ने श्रद्धापूर्वक अपनाया। इससे प्रसन्न होकर स्वामीजी ने 29 नवम्बर 1882 को पं. कृपाराम को लिखा कि महाराणा ने उनके उपदेशानुसार अपनी दिनचयाऱ् और राजकार्य आरम्भ कर दिया है।

उदयपुर और शाहपुरा के शासकों द्वारा आमंत्रण एवं उनके उपदेशों के पालन से स्वामीजी अत्यंत उत्साहित हुए। जब जोधपुर के महाराज प्रताप सिंह और रावराजा तेजसिंह ने उन्हें आमंत्रित किया, तो उन्होंने इसे आर्यावर्त की उन्नति का शुभ संकेत माना। 1 मई 1883 को रावराजा तेजसिंह को लिखे पत्र में उन्होंने लिखा कि "आर्यावर्त की उन्नति का समय आ गया है" और परमेश्वर से प्रार्थना की कि ये राजा वैदिक धर्म और सनातन राजनीति द्वारा देश की समृद्धि करें।

इन पत्रों से स्वामी दयानन्द का उद्देश्य स्पष्ट होता है—धर्माधारित, न्यायपूर्ण और लोकक्ल्याणकारी शासन की स्थापना।

स्वामी दयानन्द सरस्वती द्वारा देशी राजाओं को लिखे गये पत्र केवल आध्यात्मिक या नैतिक उपदेश नहीं थे, बल्कि उनमें राजनीतिक, सामाजिक और प्रशासनिक दिशा-निर्देश भी निहित थे। उनके पत्रों में राज्य की व्यवस्था, शासक के कर्तव्य और जनक्ल्याण की भावना का स्पष्ट प्रतिपादन मिलता है।

महाराणा सज्जन सिंह के भाई सर प्रताप सिंह को लिखे पत्र में स्वामीजी ने उनकी स्वास्थ्य-उपेक्षा पर खेद व्यक्त करते हुए कहा कि जिस राज्य में सोलह लाख

से अधिक लोग बसते हैं, उनके कल्याण का भार कुछ ही व्यक्तियों पर है। यदि वे स्वयं स्वस्थ नहीं रहेंगे तो देश का सुधार संभव नहीं। उन्होंने उन्हें अपनी दिनचर्या सुधारने का उपदेश दिया और लिखा कि ''आप जैसे योग्य पुरुष संसार में बहुत कम जन्मते हैं; आपके दीर्घायु होने से ही आर्यावर्त का कल्याण संभव है।'' इस पत्र से स्वामीजी की यह भावना प्रकट होती है कि राष्ट्र की उन्नति योग्य और धर्मनिष्ठ नेताओं के स्वास्थ्य, संयम और कर्तव्यनिष्ठा पर निर्भर है।

रावराजा तेजसिंह को 19 मई 1883 को लिखे पत्र में उन्होंने अपने उपदेशों से प्राप्त परिणामों पर प्रसन्नता व्यक्त की और कहा कि ''आर्यावर्त की उन्नति राजा और उनके कार्यों पर निर्भर है, क्योंकि यथा राजा तथा प्रजा।'' गीता के 'यद्यदाचरति श्रेष्ठः' (3/21) श्लोक का उल्लेख करते हुए उन्होंने यह प्रतिपादित किया कि राजा और राजपुरुषों के सत्य, धर्मयुक्त आचरण से ही समस्त समाज सुखी और समृद्ध हो सकता है।

स्वामीजी ने शाहपुराधीश महाराणा नाहरसिंह को भी पत्रों द्वारा राजधर्म की शिक्षा दी। उन्होंने उन्हें बताया कि राजा का मुख्य उद्देश्य धर्म के अनुरूप शासन करना और प्रजा के कल्याण को सर्वोपरि रखना है। उन्होंने स्पष्ट कहा कि ''एक को स्वतंत्र राज्य का अधिकार नहीं देना चाहिए; राजा सभापति के अधीन हो, सभा राजा के अधीन हो, और प्रजा राजसभा के अधीन रहे।'' यह विचार उनके लोकतांत्रिक दृष्टिकोण और संतुलित शासन प्रणाली के समर्थन को प्रकट करता है।

इन पत्रों से स्पष्ट होता है कि स्वामी दयानन्द का राजधर्म-सिद्धान्त धर्म, नीति, उत्तरदायित्व और प्रजातांत्रिक भावनाओं के समन्वय पर आधारित था। उन्होंने शासकों में केवल सत्ता की चेतना नहीं, बल्कि कर्तव्य, सेवा और लोककल्याण की भावना जगाने का कार्य किया।

स्वामी दयानन्द ने अपने राजनीतिक विचारों में लोकतान्त्रिक व्यवस्था को अत्यंत महत्त्वपूर्ण माना। उन्होंने सभा और उसके अधिपति के निर्वाचन की बात करते हुए यह स्पष्ट किया कि राजा, सभा और प्रजा — इन तीनों का परस्पर संतुलन और नियंत्रण आवश्यक है, ताकि शासन में स्वेच्छाचारिता न बढ़े। जोधपुर प्रवास के दौरान उन्होंने राजा और जनसामान्य को धर्म, नीति और राजधर्म का उपदेश दिया। उदयपुर के कृष्णसिंह बारहठ को लिखे पत्र में उन्होंने जोधपुर नरेश के चरित्र और सुधार की संभावनाओं का उल्लेख करते हुए कहा कि राजा को विषयभोग, मद्यपान और अन्य दुष्कमोज़ं से दूर रहकर प्रजा का पुत्रवत् पालन करना चाहिए।

स्वामी दयानन्द का मानना था कि राजा का चरित्र ही राज्य की प्रतिष्ठा का आधार है। यदि राजा सत्याचारी और नीति का पालन करने वाला होगा, तभी प्रजा

का कल्याण संभव है। उन्होंने 'व्यवहारभानु' और 'संस्कृत वाक्यप्रबोध' जैसे ग्रंथों में दरबार की चाटुकारिता, लोभ और अनीति के दुष्परिणामों का वर्णन किया और यह बताया कि मूर्ख राजा और खुशामदी दरबारी राज्य को पतन की ओर ले जाते हैं। उनके पत्रों और शिक्षाओं से स्पष्ट होता है कि वे ऐसे शासक की कल्पना करते थे जो आत्मसंयमी, न्यायप्रिय और धर्मपरायण हो तथा राष्ट्र के कल्याण को अपना सर्वोच्च कर्तव्य माने।

**3. स्वामी दयानन्द के पत्रों में तत्कालीन राजाओं के चरित्रगत दोषों की विवेचना**

स्वामी दयानन्द ने अपने पत्रों के माध्यम से तत्कालीन राजाओं के व्यक्तित्व और व्यवहार में विद्यमान दोषों का खुलकर विवेचन किया। उन्होंने जोधपुर के महाराजा जसवन्तसिंह में व्यसन और अनुचित संबंधों की बुराईयों की ओर ध्यान आकृष्ट कराया और उल्लेख किया कि यह दोष वंशानुगत था। उन्होंने उन्हें सत्कर्म, न्याय और धर्म के मार्ग पर चलने का उपदेश दिया, ताकि वे प्रजा के कल्याण और स्वयं की प्रतिष्ठा सुनिश्चित कर सकें।

स्वामीजी ने अपने 'गुप्त समाचार' और 'प्रसिद्ध समाचार' शीर्षक पत्रों में राजा और उनके परिवार के लिए स्पष्ट निर्देश दिए। उन्होंने कहा कि जीवन भर न्याय और धर्मपूर्वक शासन करना चाहिए, महाराजा कुमार को उत्तम भोजन और औषधि युक्त दूध देना चाहिए, अनुज महाराज प्रतापसिंह को राजकार्य से पृथक् न करना चाहिए। उन्होंने वर्षा की कमी और रोगों की रोकथाम के लिए यज्ञ कराने का सुझाव दिया।

स्वामी दयानन्द ने निजी पत्रों में राजा को व्यसन जैसे मद्यपान, उपपत्नी और अन्य दोषों से दूर रहने का निर्देश दिया। उन्होंने सुनिश्चित किया कि राजकुमार ब्रह्मचारी होकर सनातन आर्ष ग्रंथों का अध्ययन करें, हिंदी और संस्कृत में शिक्षा प्राप्त करें, और आवश्यकता पड़ने पर अंग्रेजी और पाश्चात्य दर्शन का भी ज्ञान प्राप्त करें। इसके साथ ही उन्होंने मनुस्मृति के 7, 8 और 9वें अध्यायों के राजधर्म सिद्धांतों का स्मरण कराते हुए कहा कि राजा का चरित्र और आचरण ही प्रजा और राज्य की उन्नति का आधार है।

इन पत्रों से स्पष्ट होता है कि स्वामी दयानन्द का उद्देश्य केवल नैतिक उपदेश देना नहीं था, बल्कि शासकों को धमर्ज़निष्ठ, संयमी और न्यायप्रिय बनाकर राज्य और समाज का सुधार करना था।

**4. महाराणा सज्जन सिंह को दिये गये स्वामी दयानन्द के उपदेश**

स्वामी दयानन्द के राजनीतिक और सामाजिक विचारों का स्पष्ट उदाहरण उनके महाराणा सज्जन सिंह को दिये गये उपदेशों में मिलता है। उन्होंने महाराणा को धर्म, नीति और राजधर्म के मार्ग पर चलने का विस्तृत निर्देश दिया। उन्होंने कहा कि नायिका

भेद जैसे विषयोद्दीपक और भ्रष्ट साहित्य से परहेज करें, कुपथगामी संन्यासियों और मद्यपान, वेश्या संग, श्रृंगारप्रधान नृत्यगान से दूर रहें।

स्वामीजी ने महाराणा को एक नियमित दिनचर्या अपनाने का निर्देश दिया, जिसमें उषाकाल में शैय्या त्याग, छह घंटे तक राजकार्य, प्रातः योगाभ्यास और मनुस्मृति एवं व्याकरण का अध्ययन शामिल था। उन्होंने राज्य के कल्याण और धर्म प्रचार हेतु वृहद् होम कराने, क्षात्रशाला, अनाथ एवं विधवाओं के पालन, वैदिक धर्म प्रचार और आर्ष ग्रंथों के प्रकाशन हेतु बजट आवंटित करने की सलाह दी।

राज्य में अन्याय और अत्याचार रोकने, बाल विवाह और बहुविवाह की प्रथाओं का निषेध करने, निर्दोष पर दंड न लगाने और दशहरा के अवसर पर निर्दोष पशुओं की हिंसा रोकने पर बल दिया गया। स्वास्थ्य और वर्षा वृद्धि के लिए वृहद् होम कराये जाने की व्यवस्था भी सुझाई गई।

इसके अतिरिक्त 'रहस्य नियम' शीर्षक से महाराणा के लिए कुछ गोपनीय निर्देश भी दिये गए, जिनमें आयुर्वेद और शास्त्रों के अनुसार गर्भाधान और गर्भस्थापना के पश्चात् पति-पत्नी की जीवनचर्या का विस्तृत उल्लेख किया गया है।

## 5. झालावाड़ और अन्य राजाओं को लिखे गए स्वामी दयानन्द के राजनीतिक पत्र

स्वामी दयानन्द ने केवल उदयपुर और जोधपुर के शासकों को ही नहीं, बल्कि झालावाड़ के राजराणा और अन्य राजस्थान के राजाओं को भी राजनीति, न्याय और राजधर्म का उपदेश दिया। उन्होंने पत्रों में स्पष्ट किया कि राजा को हास्य, वेश्यानृत्य, व्यसन और लोभी-संगठनों से दूर रहना चाहिए। राजदरबार में वर्ण संकर, स्वार्थी, मूर्ख या राजद्रोही लोगों को न रखना चाहिए। राजा को दुष्टों से बचकर धर्म, गौरक्षा और प्रजा के कल्याण के कार्यों में तत्पर रहना चाहिए।

स्वामीजी ने न्याय और दण्ड व्यवस्था को शासन का प्रमुख अंग माना। उन्होंने स्पष्ट निर्देश दिए कि जितना अपराध होगा, उसी अनुसार दण्ड और जितना उत्तम कार्य होगा, उतना पारितोषिक देना चाहिए। राजा स्वयं न्याय में सक्रिय रहे, अन्यथा राज्य में अन्याय और भ्रष्टाचार बढ़ेगा। उन्होंने मद्यपान, व्यसन और अनुचित संबंधों से दूर रहने के साथ-साथ राजकुमारों की शिक्षा और स्वास्थ्य पर विशेष ध्यान देने की सलाह दी।

स्वामी दयानन्द ने राजकुमारों के लिए ब्रह्मचारी जीवन, सनातन ग्रंथों का अध्ययन और योगाभ्यास जैसी शिक्षा सुझाई। उन्होंने स्पष्ट किया कि धर्म, न्याय और संयमहीनता ही प्रजा और राज्य की उन्नति में सबसे बड़ा बाधक हैं।

उनके पत्रों और व्याख्यानों से यह स्पष्ट होता है कि स्वामी दयानन्द तत्कालीन

राजनीतिक स्थिति से अत्यंत व्यथित थे और उन्होंने शासक जाति की भूमिका को आर्यावर्त के कल्याण और सुधार में निर्णायक माना। वे सभी राजाओं से आग्रह करते थे कि वे वेदों और ऋषियों के निर्देशानुसार शासन करें, जिससे देश की स्थिति सुधार और उन्नति की राह पर आ सके।

**6. स्वामी दयानन्द के पत्रों में राजकुमारों की शिक्षा व्यवस्था**

स्वामी दयानन्द ने राजाओं के साथ-साथ राजकुमारों की शिक्षा पर भी विशेष ध्यान दिया। उन्होंने महाराणा सज्जन सिंह के उत्तराधिकारी उदयसिंह को उदयपुर की गद्दी पर आने के बाद वैदिक धर्म और राजधर्म के मार्ग पर चलने के लिए मार्गदर्शन दिया। शाहपुराधीश नाहरसिंह ने उनके सुझावों का पालन करते हुए 'सत्यार्थ प्रकाश' की प्रति प्राप्त कर अपने पूर्वजों के धर्म का अनुसरण करने का प्रण लिया। यह ऐतिहासिक प्रति बाद में 'परोपकारिणी सभा' के संग्रह में सुरक्षित रखी गई।

स्वामी दयानन्द ने मसूदा के राव राजाबहादुर सिंह और अन्य रियासतों के राजाओं और राजकुमारों को भी राजधर्म और राजनीति का ज्ञान देने का प्रयास किया। हालांकि सभी शासकों तक उनका मार्गदर्शन पूर्ण रूप से नहीं पहुँच सका, लेकिन उनके पत्रों में स्पष्ट है कि उनका उद्देश्य केवल धामिज़्क उपदेश देना नहीं था, बल्कि राज्य और प्रजा की समग्र उन्नति सुनिश्चित करना था।

स्वामी दयानन्द ने भारतीय प्राचीन वैदिक राजनीतिक चिन्तन को आधार बनाकर अपने विचार स्थापित किए। उन्होंने अरस्तू, हॉब्स, लॉक, रूसो, मार्क्स, प्लेटो आदि पश्चिमी चिन्तकों से प्रभावित हुए बिना, प्राचीन ऋषियों—प्राचेतस, शुक, नारद, भीष्म, कृष्ण, विदुर, कौटिल्य—की शिक्षाओं का अनुसरण किया। उनके पत्रों के माध्यम से यह दृष्टि स्पष्ट होती है कि वे वैदिक ग्रंथों और ऋषि शिक्षाओं के अनुसार राजा और राजकुमारों को न्याय, धर्म, संयम और प्रजा कल्याण के मार्ग पर चलने के लिए प्रेरित करना चाहते थे।

**7. स्वामी दयानन्द के पत्रों में राजधर्म उत्पत्ति विषयक विवेचना**

स्वामी दयानन्द ने अपने पत्रों में राजधमज़् की उत्पत्ति, शासन और राजकुमारों की शिक्षा पर विस्तृत विवेचना की। उनके अनुसार राज्य का मुख्य उद्देश्य प्रजा के कल्याण और धर्म की रक्षा है, और राजा जनता का सेवक होता है, ईश्वर का नहीं। उन्होंने कहा कि राज्य की उत्पत्ति मानव जीवन की आवश्यकताओं से हुई, और सामाजिक नियमों का पालन मनु की राजव्यवस्था के अनुसार होना चाहिए। राजा और प्रजा में पिता-पुत्र समान उत्तरदायित्व होना चाहिए, और यदि राजा अधर्म करे तो प्रजा उसे दण्ड दे।

स्वामी दयानन्द ने तीन प्रकार की संसद की कल्पना की—विद्या आर्य सभा

शिक्षा का प्रबंधन करे, धर्म आर्य सभा न्याय बनाए रखे, और राज आर्य सभा प्रशासन संचालित करे। सांसदों में वेदज्ञान, स्मृति, दण्डनीति और योगाभ्यास जैसी योग्यताएँ होनी चाहिए। राजा का निर्वाचन जनप्रतिनिधियों द्वारा होना चाहिए और संविधान नैतिक, पक्षपातरहित तथा शक्तिशाली हो।

उन्होंने शासन की दिनचर्या, मंत्रियों की संख्या और गुण, दण्ड नीति, कर नीति, युद्ध नीति और विकेन्द्रीयकरण पर भी स्पष्ट दिशा-निर्देश दिए। राजा को प्रजा की भलाई, शिक्षा, कृषि, व्यापार, गौरक्षा और सामाजिक कल्याण की व्यवस्था में तत्पर रहना चाहिए। इसके अतिरिक्त उन्होंने विश्व संघ या चक्रवर्ती राज्य की परिकल्पना भी की, जिसमें ग्राम स्तर से लेकर राज्य तक सभी प्रशासनिक निकायों का समन्वय सुनिश्चित हो।

इस प्रकार स्वामी दयानन्द का राजधर्म और राजनीतिक विचार केवल शासन तक सीमित नहीं थे, बल्कि वे सामाजिक सुधार, न्याय, शिक्षा और राष्ट्रव्यापी समन्वय तक विस्तृत थे, जो वैदिक शास्त्रों पर आधारित थे और भारत में एक संगठित, न्यायपूर्ण और समृद्ध राष्ट्र की कल्पना प्रस्तुत करते थे।

**8. स्वामी दयानन्द के पत्रों में राजभाषा की महत्ता और उसकी आवश्यकता**

स्वामी दयानन्द ने अपने पत्रों में राजभाषा की महत्ता पर बल दिया और हिन्दी को आर्य भाषा के रूप में प्रचारित किया। उनके अनुसार राजकार्य और शिक्षा में एक राष्ट्रभाषा का होना आवश्यक है, ताकि जनता शासन से जुड़ी जानकारी आसानी से समझ सके। अंग्रेजी, उर्दू और फारसी के प्रचलन के बावजूद उन्होंने हिन्दी को राजभाषा बनाने के लिए व्यापक प्रयास किए और आर्य समाजों को पत्र लिखकर कमीशन को ज्ञापन भेजने के लिए प्रेरित किया।

स्वामी दयानन्द का दृष्टिकोण था कि राजभाषा केवल प्रशासन तक सीमित न रहे, बल्कि शिक्षा, शास्त्रार्थ और न्याय के लिए भी उपयुक्त हो। उन्होंने पत्रों में निर्देश दिया कि सरकारी पत्र, विज्ञापन और शासकीय संवाद नागरी (हिन्दी) में लिखे जाएँ। इसके माध्यम से वे चाहते थे कि राजा और प्रजा दोनों ही सत्य-असत्य का निणज्र्य आसानी से कर सकें और प्रशासनिक कार्य सुचारू रूप से हो।

सारत: स्वामी दयानन्द ने राजभाषा हिन्दी को राजनीतिक और प्रशासनिक दृष्टि से देश के सर्वश्रेष्ठ शासन और राष्ट्रीय एकता की आधारशिला माना। उनके पत्रों से यह स्पष्ट होता है कि वे राजा, मंत्री, भाषा, आचरण, निर्वाचन और दण्डनीति के विषयों में समग्र वैदिक दृष्टि अपनाने के पक्षधर थे।

निष्कर्षत: स्वामी दयानन्द ने राजाओं और राजकुमारों को उनके कर्तव्यों का बोध कराते हुए न्याय, धर्म, शिक्षा और आचार-संस्कार का पालन कराने पर जोर

दिया। उन्होंने शासन, दण्ड नीति, अर्थ, कर व्यवस्था, कृषि, सेना और राष्ट्रहित के अन्य कार्यों में वैदिक सिद्धांतों को लागू करने का निर्देश दिया। राजा और जनता के बीच उत्तरदायित्व और समन्वय पर बल दिया। उन्होंने राजभाषा हिन्दी (आर्य भाषा) के प्रचार-प्रसार और शिक्षा, प्रशासन, शास्त्रार्थ में इसके उपयोग की आवश्यकता पर जोर दिया।

संक्षेप में, स्वामी दयानन्द का राजनीतिक दर्शन वैदिक मूल्यों पर आधारित, न्यायोन्मुख, प्रजा-हितैषी, शिक्षाप्रधान और राष्ट्रवादी था।